जिहाद (धार्मिक युद्ध)

लेखक : आयतुल्लाहिल उज़मा सैय्यदुल उलमा सैय्यद अली नक़ी नक़वी (ता0 स0)
अनुवादक : जनाब मिर्ज़ा सज्जाद हुसैन साहब (मरहूम)

जिहाद का अर्थ

जिहाद का शब्द शाब्दिक अर्थानुसार तो ''जेहाद'' शब्द से उत्पादित (प्रतीत) होता है जिसका अर्थ है यत्न करना और जोहद से भी जिसका अर्थ है शक्ति व सामर्थ। इससे मुक़ाबले अर्थात प्रतियोगिता करने का भी अर्थ ज्ञात होता है प्रथम दशा में अर्थ है किसी से यत्न में प्रतियोगिता करना तथा दूसरी अवस्था में शक्ति एंव साहस में प्रतियोगिता।

शरीअत (इस्लामी नियमों) में वह दुष्ट मार्गियों से तलवार लेकर मुक़ाबला करने का नाम हो गया है। तथा इसी जेहाद के आदेशों का वर्णन करना ही इस पत्रिका लेखन का ध्येय है।

''वध/क़त्ल करना और जेहाद''

क्योंकि देश के स्वतन्त्रता संग्राम में एक संगठन ने देश के राजनीतिक नेता की संरिचता में ''आहिंसा'' के नियमों का पालन किया तथा उस विचाार ने मन तथा हदय पर गहरा प्रभाव डाला तथा इस्लाम की जेहाद शिक्षा उन्हें इस दृष्टिकोण अहिंसा के विपरीत, विरोधी तथा प्रतिकूल ज्ञात हुई अतः उन्होंने अपनी राजनीति विचारों के साथ अपने धर्म इस्लाम को सुरक्षित रखने के लिए जेहाद के शाब्दिक अर्थ से लाभ उठाते हुए यह कहा कि जिहाद तो सत्य मार्ग में असत्य के मुक़ाबले में प्रयत्न करने का नाम है अतएव यह अहिंसा की मुक़ाबले की चीज़ भी कही जा सकती है किन्तु इसे क्या किया जाए कि पवित्र कुरान में ''जेहाद'' शब्द तो कम स्थानों पर प्रयुक्त हुआ है, अधिकतर 'क़िताल' प्रयोग हुआ है जो स्पष्ट है कि क़त्ल करने से बना है जिसके अर्थ मार डालने के हैं। अतः इसमें अप्रत्यक्ष रूप से रक्त बहने वाले मुक़ाबले (युद्ध) ही का आशय पाया जाता है। कुरान में है ''तुम पर सत्य मार्ग में मरने-मारने का आदेश लागू किया गया है, ये तुमको अप्रिय एंव नापसंद है परन्तु बहुत सम्भव है कि किसी वस्तु को तुम नापसंद करते हो तथा वास्तव में वह तुम्हारे लिए भली व अच्छी हो तथा वह किसी वस्तु को तुम पसन्द करते हो परन्तु तुम्हारे लिए कष्टदायक एंव बुरी हो। कारण है अल्लाह ज्ञानी है एंव तुम अज्ञानी एंव मूर्ख''

उपरोक्त कथन में अल्लाह की ओर से जिहाद की अच्छाइयों एंव विशेषताओं की ओर संकेत है यद्यपि मानव को इसमें दोष दीख पड़ते हैं परन्तु मनुपुत्र मानव के लिए इसके परिणाम लाभप्रद एंव सुखदायक हैं।

दूसरे स्थान पर अल्लाही कथनः-

''सत्य मार्ग 'अल्लाही मार्ग' के प्रति युद्ध करो उनसे जो तुमसे युद्ध करें और तुम भी सीमा से आगे न बढ़ो क्योंकि अल्लाह सीमा को पार करने वालों को प्रिय नहीं रखता।''

तीसरे स्थान पर अल्लाही वाणीः-

''युद्ध करो ताकि परस्पर की लड़ाई झगड़े, द्वेष भावनाए समाप्त हो जाए''

चौथे स्थान पर अल्लाह का वाक्यः-

''तुम्हें क्या है कि नही युद्ध करते तुम सत्य मार्ग तथा अल्लाह के लिए तथा उन बलहीन पुरूषों, स्त्रियों एंव बच्चों के लिए जिन्हें कष्ट पंहुचाया जाता है तथा उनका कोई सहायक नहीं''

पाँचवें स्थान पर कुरान में हैः-

''ऐ मुहम्मद स0 (पैग़म्बर) मुसलमानों को युद्ध करने पर उत्साहित करिए''

छटे स्थान पर कुरान में हैः-

क्रय कर लिया है मुसलमानों से उनके प्राणों एंव धन को और इसके मूल्यस्वरूप उनके हेतु स्वर्ग हैं।

वह अल्लाही मार्ग के प्रति युद्ध करते हैं अतः क़त्ल होते है एंव क़त्ल करते हैं''।

सातवें स्थान पर अल्लाह का फ़रमान

''और यदि मुसलमानों के दो संगठन (जत्थे) परस्पर युद्ध कर रहे हों तो दोनों में समझौता करा दो तथा यदि एक दूसरे के विरोध में बाग़ी स्वरूप हों तो उस बाग़ी 'दुष्ट मार्गी' गठन से युद्ध करो यहाँ तक कि वह सत्य मार्ग पर आ जाए''

इसके अतिरिक्त भी अनेकों स्थानों में क़िताल/क़त्ल करने, युद्ध करने का ही शब्द प्रयोग किया गया है। हां कहीं कहीं जिहाद के शब्द का भी प्रयोग है- जैसे ऐ पैग़म्बर कुमार्गियों, दुष्टों से जिहाद करिए। सत्य के लिए जिहाद करो आदि। यदि इन कथनों में शाब्दिक अर्थ के दृष्टिकोण से 'जेहाद' के शब्द को अहिंसा तलवार न उठाने आदि के रूप में ही माना जाये तो पहले दिये गये कथन इस अशुद्धि को दूर कर देंगे। फिर यह कि बहुत से कुरान के ऊपर दिये गये कथनों में ''प्राणौधार धन के साथ'' के भी शब्द लगे हैं तथा यह भी इस शंका का समाधान तथा इस अशुद्धि के सुधार के लिए पर्याप्त है तथा इस से सुस्पष्ट भी है कि जेहाद उस मुक़ाबले का नाम है जिस में प्राण एंव धन दोनों की बाजी लगानी पड़ती है तथा वह ही जिसे उपरोक्त कथनों में 'क़िताल/क़त्ल करने के शब्द से विभूषित किया गया है अतएव उसमें 'अहिंसा' लेखनी दारा जेहाद (मुक़ाबला)'' तथा ''प्रयत्न करके मुक़ाबला'' आदि अर्थ निकालने का प्रयत्न केवल व्यर्थ ही है। जिहाद का यह अर्थ नहीं है।

जिहाद पर कुछ स्पष्ट विचार

इमामिया मिशन की ''सुलह और जंग'' पत्रिका में इस विषय पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला गया है। अतएव उसका संक्षिप्त वर्णन यहां दिया जाता है।

जिस प्रकार विभिन्न समस्याओं पर प्रत्येक मनुष्य अलग अलग विचार रखता है, उसी प्रकार समझौता मेल एंव युद्ध के विषय में भी मानव दो वर्गों में विभाजित हो गये हैं। एक ओर तो हिटलर वाला दृष्टिकोण कि मनुष्य के जीवन का उद्देश्य युद्ध के अतिरिक्त कुछ हो ही नहीं सकता तथा दूसरी ओर कुछ संगठनों व जातियों का 'अहिंसा' वाला ध्येय कि चाहे जो कुछ हो कभी तलवार हाथ में न लो तथा रक्त न बहाओ।

यह दोनों शिक्षाएं अपने असाधारण रूप के कारण मनुष्यता के लिए लाभप्रद एवं हितकारी नहीं हो सकती। यदि प्रत्येक मनुष्य एवं हर एक संगठन यह विचार कर ले कि हमें दूसरे से मुक़ाबला करना चाहिए तथा सदैव युद्ध करते रहना चाहिए तो क़त्ल एंव हत्या का एक सिलसिला स्थापित हो जाएगा एंव अति शीघ्र समस्त मानव मृत्यु के घाट उतर जाएंगे।

इसी प्रकार केवल अहिंसा भी मानव के लिए हितकारी नहीं। अहिंसा में सुधार की शक्ति उसी समय तक है जब तक विरोधी दल में इतनी मानवता है कि वह धैर्य एंव सहनशीलता का आदर करें परन्तु यदि विरोधी इन (धीरता सहनशीलता) आदि से प्रभावित होने योग्य नहीं रहा तो ऐसी स्थित में अहिंसा, अत्यधिक हिंसा का कारण बन जाती है। एक गाल पर थप्पड़ पड़ने के बाद दूसरा गाल बढ़ाने पर यदि विरोधी इतना सभ्य है कि लज्जित होकर हाथ हटा ले तथा उसको मारने के बाद दूसरों पर हाथ न उठाए तो इस रूप में यह कार्य प्रशंसनीय होगा किन्तु एक गाल पर मारने के बाद दूसरा गाल बढ़ाने पर यदि वह ऐसा दुष्ट है कि गर्दन ही उड़ा दे तथा फिर तलवार लेकर दूसरे मनुष्यों पर आक्रमण कर दे तो उसका यह कार्य उचित न होगा बल्कि दूसरे मनुष्यों के प्राण लेने का उत्तरदायी भी होगा।

वास्तविकता यह है कि जिस प्रकार संसार मे दो वस्तुएं प्रचलित एंव प्रयोग में लाई जाने वाली हैं, एक धैर्यशक्ति एंव दूसरे दमन-शक्ति। वैसे ही मनुष्य के लिए अवसर तथा समयानुसार दोनों ही शक्तियां आवश्यक होती है (समझौता भी एंव युद्ध भी) किन्तु दमन-शक्ति उस समय प्रज्वलित होती है जिस समय कोई अप्रिय अवसर अथवा वस्तु सामने आती है तथा यह मानवीय प्रकृति है अतएव समझौता करना ही श्रेष्ठ है एंव युद्ध उस समय उचित है जब कि यथासम्भव समझौता तथा मेल मिलाप हो ही न सके अतः शक्ति के हेतु इस प्रश्न की आवश्यकता नहीं होती कि यह क्यों है तथा युद्ध के हेतु इस वादविवाद की ज़रूरत नहीं कि वह किस लिए

है और यदि कोई उचित कारण न हो तो वह युद्ध धिक्कार योग्य हो सकता है।

अतएव पवित्र कुरान, जिसकी शिक्षाओं का विशेष गुण ''माध्यमिकता'' अवसरानुसार युद्ध की आज्ञा दी है परन्तु प्रत्येक स्थल पर इसे ''अल्लाह के प्रति'' शब्दों के साथ बाध कर दिया है ताकि उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हो जिससे अल्लाह भी प्रसन्न हो तथा ऐसे ही युद्ध का धार्मिक जेहाद नाम से विभूषित होना उचित होगा।

युद्ध के भेद

युद्ध के साधारण रूप से 3 भेद हैं:

(1) मुदाफिआना जंग (अहिंसा द्वारा युद्ध) (2) जवाबी जंग, (उत्तर स्वरूप युद्ध), (3) इबतिदाई जंग (बेजोड़ एवं अत्याचार पूर्ण युद्ध)।

प्रथम प्रकार का युद्ध जिसमें केवल अहिंसा का पाठ पढ़ाया जाता है। असंभव एवं मानव स्वभाव प्रकृति के प्रतिकूल है।

दूसरे प्रकार का युद्ध (उत्तर स्वरूप युद्ध) उस समय तो अवश्य दोषपूर्ण है जब विरोधी दल जिसने कभी हम पर आक्रमण किया था अपने उन विचारों एवं भावनाओं को छोड़ बैठा जो युद्ध होने के कारण थे एवं उसको अपने पूर्व किये गये कार्य पर पश्चयाताप भी हुआ हो इस अवस्था में उसके पूर्वभूत किसी आक्रमण का उत्तर देना बदला लेने की भावना का अशुद्ध प्रयोग होगा। यदि उसने हम पर आक्रमण एक बार किया है तथा अवसर की प्रतीक्षा कर रहा है तो उत्तरस्वरूप (जवाबी) युद्ध अनुचित न होगा। यदि संसार में जुर्म करने के दंड नियत हैं तथा बदला लेना ठीक है तो इस प्रकार का कार्य भी उचित है इस शर्त के साथ कि उन ही सीमाओं के भीतर रहे कि जिन सीमाओं में विपक्षियों (विरोधियों) ने हमारे साथ किया था अतः पवित्र कुरान में ऐसे अवसर पर यह प्रतिबन्ध लगा है ''उसके विरोध में उतनी ही विरोधता से काम लो जितना उसने तुम्हारे साथ किया।''

तीसरे प्रकार का अर्थात अत्याचार पूर्णयुद्ध उस पर यदि विहंगम दृष्टि डाली जाये तो यह ज्ञात होगा कि वह किसी भी रूप से उचित नहीं है। किन्तु कल्पना कीजिये आप सशक्त है तथ आप को ज्ञान है कि कोई मनुष्य अथवा संगठन कुछ सज्जनों का रक्त बहा रहा है या किसी दूसरे प्रकार से महान उद्देश्यों का दमन कर रहा है तो आप थोड़ी हिंसा क्रूरता से उस संगठन का दमन कर, मानव जाति पर कृतज्ञता ही करेंगे उसकी गणना अत्याचारों हिंसा आदि में न होगी तो क्या कारण है आप का ऐसा करना उचित न हो तथा उन दोषों के निवारणार्थ उन मनुष्यों का अन्त न कर दिया जाये जो इन दोषों के उत्तरदायी हैं। तो ज्ञात हुआ कि अत्याचार पूर्ण युद्ध भी लाभकारी सिद्ध होता है यदि उसका प्रयोग उचित अवसर पर किया जाये।

''अल्लाह के प्रति'' का आशय

पवित्र कुरान में प्रत्येक स्थल पर क़त्ल करने को ''अल्लाह के प्रति (फी सबीलिल्लाह)'' के साथ कहा है। इसका आशय यह है कि युद्ध उन उद्देश्यों, विशेषताओं एंव शिक्षाओं को सुरक्षिता एंव बचाव के कारण हो जो अल्लाह को पसन्द हो। इससे आशय यह है कि कोई ऐसा युद्ध उचित नहीं हो सकता जो केवल किसी मनुष्य अथवा संगठन अथवा जाति की शक्ति एंव अधिकार-प्राप्ति के प्रति हो जब तक उसमें सत्यता विद्यमान न हो तथा वह अल्लाह के प्रति न हो।

सत्य मार्ग की खोज में कठिनाई

सबील (मार्ग) के क्या अर्थ है? रास्ता जिसकी ओर संकेत हो वह समझना चाहिए जैसे ''तरीकुल बसरा'' अर्थात बसरे का मार्ग। हमारे यहां लखउऊ का मार्ग, बम्बई का मार्ग, आदि। इस सब का क्या अर्थ? यह कि उस मार्ग पर चलकर हम अभीष्ठ स्थान पर पहुँचते हैं। अब यह तो मार्ग (स्थान) सभी भौतिक हैं अतः मार्ग भी भौतिक एंव नाशवान के रूप में हैं जिन्हें शारीरिक पैरों से तय किया जाता है किन्तु वहां क्या है? सबीलिल्लाह 'अल्लाह-मार्ग' तो इस से क्या तात्पर्य? वह मार्ग जिस पर चलकर अल्लाह की प्राप्ति हो, अल्लाह क्योंकर मिलेगा अर्थात उसकी इच्छा प्राप्ति हो, तो यह मार्ग कब कोई भौतिक (नाशवान) मार्ग होगा। यह आचरण, सभ्यता एंव चरित्र का वह स्थान होगा जो अल्लाह की इच्छा के अनुरूप हो। अल्लाह की इच्छा का ज्ञान यदि सरल कार्य होता है तो पैग़म्बरों आदि के आने की आवश्यकता ही क्या थी? पैग़म्बरों के आने का प्रमुख

ध्येय ही यह था कि वह अल्लाह की इच्छा से संसार को परिचित करायें फिर जब साधारण आदेशों का प्रचार हो चुका हो तब भी विशेष अवसर पर उन त्रुटियों का होना सम्भव है अब जितना ही अवसर विशेष हो उतनी ही त्रुटि भयानक एंव कष्टदायक होगी।

जिहाद में एक दो मनुष्यों के प्राणों एंव धन का प्रश्न नहीं होता अपितु अनेकों मनुष्यों एंव अत्यधिक धन की हानि का प्रश्न होता है। एक तो अपने प्राण ही अमूल्य है जिसकी सुरक्षिता एंव बचाव के प्रति इस्लामी नियमों के स्पष्ट आदेशों में बहुधा वर्णन किया गया है फिर दूसरों के प्राणों तथा वह घमासान युद्ध जिसका परिणाम बहुधा अनन्त एंव अगणित मनुष्यों की मुत्यु हुआ करता है तथा उत्तर स्वरूप तथा उत्तरोत्तर स्वरूप युद्धों से तो प्राण एंव धन हानि की जिस अधिकता से हानि होती है वह अवर्णनीय एंव स्वयंसिद्ध है। ऐसे स्थान पर छोटा सा दोष अत्यधिक हानि का कारण हो सकता है। अतः जिहाद के विषय को नमाज़ रोज़े की भांति प्रत्येक धर्म-पण्डित (मुजतहिद) के व्यक्तिगत विचारों पर ही नहीं छोड़ना चाहिए जिस में यदि द्वोष भी हो खोज-द्वोष (ख़ताए इज्तेहादी) का शब्द क्षमा के लिए पर्याप्त है। अतः शिया वर्ग में जो वास्तविक इस्लामी नियमों का पालन करता है तथा जिसका निर्माण हज़रत मुहम्मद तथा उनके सम्बन्धियों की शिक्षाओं एंव आदेशों के अनुसार हुआ है केवल जिहाद के इस भेद को जिसमें पानी सर चढ़ जाने पर मुक़ाबला करना होता है जिसका नाम दमन (दफ़ा) है को छोड़कार अन्य हो। शोणत बहने की सम्भावना हो बिना किसी इमाम या धार्मिक मार्ग दर्शक अर्थात पैग़म्बर के नहीं कर सकते। अतएव शियों में एक मत हो कर कहा गया है:-

इमाम के गुप्तत्व काल (ग़ैबत) में जिहाद हराम (निषेध) है।

"दमन (दिफ़ा) के भेद"

दमन (दिफ़ा) जो कभी उचित और कभी अनिवार्य है। इसके कुछ रूप है:-

(1) अपने या अपने सम्बन्धियों के प्राण एंव धन या आदर आदि पर कोई आक्रमण करे तो उसका दमन (दफ़ैया)

(2) हमें ज्ञान हो कि किसी सच्चे मुसलमान या सच्चे मुसलमान के संगठन पर कोई प्राण लेने के विचार से आक्रमण कर रहा है तथा वह स्वयं मुक़ाबला करने का सामर्थ्य नहीं रखते तो उनकी सहायता के लिए बढ़ना।

(3) इस्लामी देशों जैसे अरब तथा इराक़ पर कोई ग़ैर मुस्लिम शक्ति आक्रमण करे तो उसका मुक़ाबला समस्त मुसलमानों पर अनिवार्य है यदि स्वयं देशवासी सामर्थ्य रखते है तो उन पर अनिवार्य है यदि वे पर्याप्त न हों निकट देशों के समस्त मुसलमानों पर जहां जहां तक शक्ति प्राप्त होने की आवश्यकता हो, दमन (मुक़ाबलो) में सम्मिलित होना अनिवार्य है।

यह अनिवार्य है परन्तु कुछ छूट के साथ अर्थात जब तक कुछ ऐसे मनुष्य जिनमें शक्ति है इस कर्तव्य को न निभायें सब पर अनिवार्य रहेगा तथा सब ही पाप भोगी होंगे यदि सहायता न करेंगे। हां जब कुछ मनुष्य इस कर्तव्य को निभा दें तो शेष सब लोग बच सकते हैं अर्थात अब उन पर अनिवार्य नहीं रह जाता।

हिजरत (स्थान परिवर्तन)

ग़ैर मुस्लिम अधिक जनसंख्या वाले देशों एंव स्थानों को अपने धर्म बचाव के लिए चले जाने का नाम हिजरत (स्थान परिवर्तन) समझते है।

आधुनिक युग में हिजरत के शब्द का बहुत अधिक अशुद्ध प्रयोग होने लगा है।

इस शब्द का तात्पर्य कभी किसी लालच या लोभ से स्थान परिवर्तन नहीं है। हिजरत (स्थान परिवर्तन) केवल उसी अवस्था में अनिवार्य है जब किसी स्थान पर मनुष्य अपने धार्मिक कर्तब्यों जैसे नमाज़, रोज़ा आदि की पूर्ति करने में समर्थ न हो तो ऐसे खुले हुए स्थान की ओर प्रस्थान करना अनिवार्य है जहां वह स्वतन्त्रता पूर्वक अपने धार्मिक कार्यों एंव कर्तव्यों का पालन कर सके। इसके बिना हिजरत (स्थान परिवर्तन) अनिवार्य नहीं। बल्कि यदि स्वार्थ से काम लेकर उसका प्रस्थान दूसरे मुसलमानों के लिए कष्टदायक तथा उनके धार्मिक कार्यो को हानि पहुँचाने का कारण बने तो यह निःसंदेह अल्लाह का प्रिय न होगा तथा उस पर हिजरत शब्द का नाम देना इस पवित्र नाम का वास्तव में अनादर होगा।



(इमामिया मिशन लखनऊ का प्रकाशन नं० 306)